International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 9 Issue 4, April - 2019
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

बहरोड़ में जल संरक्षण की परम्परागत तकनीकों का पुनरूद्धार

डॉ. कमल कुमार सैनी
असिस्टेंट प्रोफेसर
पाइनस रीजनल कॉलेज, पावटा

अध्ययन क्षेत्र–

प्रस्तुत शोध का अध्ययन क्षेत्र पूर्वी राजस्थान के अलवर जिले में अवस्थित बहरोड़ तहसील है! भौगोलिक दृष्टि से बहरोड़ तहसील $70^0 37'$ से $28^0 17'$ उत्तरी अक्षांश एवं $76^0 07$ से $76^0 32$ पूर्वी देशांतर के मध्य स्थित है। बहरोड अलवर जिले के उत्तर पश्चिम में स्थित है। इसका कुल क्षेत्रफल 729.8 वर्ग किलोमीटर है। बहरोड़ तहसील के अंतरगत कुल 179 गांव है। परिवहन की दृष्टि से यह तहसील भारत के सबसे व्यस्ततम राष्ट्रीय राजमार्ग संख्या–8 पर स्थित है, जो देश एवं प्रदेश दोनो की राजधानीयों से लगभग समान दूरी (125 कि.मी.) पर स्थित हे।

बहरोड़ तहसील के उत्तर, उत्तर पश्चिम एवं पश्चिम दिशा में हरियाणा राज्य अवस्थित है जबकी दक्षिण दिशा में जयपुर जिला, दक्षिण पूर्व में अलवर की बानसूर तहसील एवं पूर्व दिशा में यह अलवर जिले की मुंडावर तहसील से घिरा हुआ है। बहरोड़ के अधिकतर गांव में औद्योगिकरण फेला हुआ है। यहां के ज्यादातर गांवो में तेज गति से उद्योगों का विकास हुआ है। देसी एवं विदेशी कम्पनिया यहां आकर उद्योगों का विकास कर रही है। उद्योगो के विकास से एक तरफ तो यहां रोजगार के अवसर बढ़े हैं जबकी दूसरी तरफ प्रदूषण में वृद्धि हुई है। अध्ययन क्षेत्र यातायात की दृष्टि से सर्वोत्तम है, यहां से गुजरने वाले राष्ट्रीय राजमार्ग–8 से बहरोड़ तहसील को एक अलग पहचान मिली है।

बहरोड़ तहसील का अधिकतर भाग मैदानी रूप में फेला हुआ है। यहां कि सबसे मुख्य नदी सोता है जो कोटपूतली से प्रारम्भ होकर बहरोड़ तहसील के जैनपुरवास एवं इस्लामपुर गांव में बहती है। बहरोड तहसील की दूसरी मुख्य नदी साबी है जो कोटपूतली तहसील से होते हुए

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 9 Issue 4, April - 2019
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

बहरोड़ एवं मुंडावर तहसील की सीमा के साथ–साथ आगे बढ़ती यह दोनो ही नदिया वर्तमान में सूखी अवस्था में है। कई सालो से इन नदियो में जल का प्रवाह रूका हुआ है।

जलसंरक्षण की परम्परागत तकनीकों का पुनरूद्धार

आज राजस्थान में जहां रेत का समुद्र है वहां पहले विशाल समुद्री लहरे उठा करती थी, लेकिन काल की लहरों ने उस विशाल समुद्र को सुखा दिया। प्रकृति के इस विराट परिवर्तन में काफी लम्बा समय लगा है तथा मरूभूमि के स्वरूप में उदभूत इस भौंगोलिक प्रदेश को हजारों वर्ष गुजर चुके है। लेकिन हमारा समाज अपने मूर्त रूप को नही भूला है। जल संरक्षण के प्रति अपने मन की गहराई को पूर्ववत अनुरक्षित कर रखा है। कहते है कि महाभारत युद्ध की समाप्ति के समय मरूभूमि के समाज को श्रीकृष्ण ने वरदान दिया था कि यहां कभी भी सूखा प्रवृत्त नहीं होगा।

बहरोड़ क्षेत्र एक ऐसा भौगोलिक क्षेत्र है, जहां वर्ष भर प्रवाहित होने वाली नदियां नहीं है। यहां मात्र दो नदियां है जो भी वर्षापोषित है। यहां पानी से संबंधित समस्याएं कम तथा अनियमित वर्षा और नदियों में सुखापन को लेकर ज्यादा उत्पन्न होती है। यहाँ प्रकृति और संस्कृति एक–दूसरे से अन्तर्सम्बन्धित है। अतीत में यहां के स्थानीय लोगों ने कई कृत्रिम स्रोतों का भी निर्माण किया है, यहां पानी के कई पारम्परिक स्रोत है, जैसे–बावडी, नाड़ी, तालाब, जोहड़ कुआँ आदि। कुएं पानी के महत्वपूर्ण स्रोत है। इसके अलावा बावड़ी भी है, बावडियों को धार्मिक दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण कहा जाता है और इनका निर्माण पुन्य कमाने के लिए किया जाता था।

बहरोड़ क्षेत्र में ही नहीं बल्कि देश के अधिकांश भागों में पारम्परिक जल संचय की प्रणालियां मृतप्राय है, उन्हें तिरस्कृत कर दिया गया है और अधिकांश को खत्म भी कर दिया गया है। आजादी के बाद से इस ह्रास में और तेजी आई है, जबकि साफ दिखता है कि जल आपूर्ति और प्रबंधन की मौजूदा केन्द्रीकृत व्यवस्था अधिसंख्य लोगों की जरूरतें पूरी करने में विफल रही है। क्षेत्र में तीव्र गति से बढती जनसंख्या और बढती पानी की मांग के कारण लोगों में यह धारणा बैठ गयी कि पारम्परिक तकनीक और प्रणालियों से जल की मांग को पूरा नहीं किया जा सकता

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 9 Issue 4, April - 2019
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

है। अतः धीरे–धीरे करके पारम्परिक प्रणालियों का बहरोड़ क्षेत्र से पतन हो गया था। लेकिन बढती हुई जल की समस्या को देखते हुए तथा भविष्य के बारे में विचार करने पर हम सोच सकते है कि आज इन जल संरक्षण की परम्परागत प्रणालियों के पुनरूद्वार की कितनी जरूरत है। बहरोड़ क्षेत्र में निम्नलिखित जल संरक्षण की परम्परागत प्रणाली महत्वपूर्ण है, जिनके पुनरूद्वार की आज क्षेत्र को अत्यधिक आवश्यकता है–

1.बावड़ी – बहरोड़ क्षेत्र में ही नही वरन् पूरे राजस्थान में कुंओं व सरोवर की तरह ही बावडी निर्माण की परम्परा अति प्राचीन है। यहां पर हडप्पा युग की संस्कृति में बावडियां बनायी जाती थी। प्राचीन शिलालेखों में बावडी निर्माण का उल्लेख प्रथम शताब्दी से मिलता है। विश्वकर्मा वास्तुशास्त्र से बावडी निर्माण की जानकारी मिलती है। प्राचीन काल में अधिकांश बावडियां मन्दिरों के सहारे बनी है। बावडियां प्राचीनकाल से ही पीने के पानी एवं सिंचाई के महत्वपूर्ण स्रोत रहे है। घरों में जब नल तथा सार्वजनिक हैण्डपम्प नहीं थे तो गृहणियां प्रातः काल एवं सांयकाल कुएं, बावडी से ही पीने का पानी लेने जाया करती थी। कुएं, बावडी अनेक सामाजिक क्रिया कलापों से भी जुडे हुए है। उदाहरण के लिए बालक के जन्म पर कुआं पूजन व उससे संबंधित गीत गाने की परम्परा आज भी विद्यमान है।

परोपकार की भावना से ओत–प्रोत होकर अनेक राजा–महाराजाओं ने और सेठ साहूकारों ने अध्ययन क्षेत्र के बहरोड, बर्डोद, नीमराणा, शाहजहांपुर, बावडी, उंटोली आदि गांवों में पेयजल स्रोतों के रूप में बावडी का निर्माण कराया। बावडी निर्माण का प्रमुख उद्देश्य वर्षा जल का संचय करना रहा है। आरम्भ में ऐसी भी बावडियां हुआ करती थी जिनमें आवासीय व्यवस्था भी हुआ करती थी। वर्तमान में इन प्राचीन बावडियों की दशा अच्छी नहीं है। यदि समय रहते इनका जीर्णोद्वार किया जाए तो ये बावड़ियां भयंकर जल संकट का समाधान बन सकती है। अतः हम सब को मिल जुलकर इनके सुधार के लिए जन चेतना फैलानी होगी।

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 9 Issue 4, April - 2019
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

2 नाड़ी –राजस्थान में सर्वप्रथम पक्की नाडी निर्माण का विवरण सन् 1520 में मिला है, जब राव जोधा जी ने जोधपुर के निकट एक नाडी बनवाई थी। नाडी एक प्रकार की पोखर होती है, जिसमें वर्षा जल संचित होता है। इसका आगार विशिष्ट प्रकार का नहीं होता है। नाडी बनाते समय बरसाती पानी की मात्रा एवं जल ग्रहण क्षेत्र को ध्यान में रखकर ही जलगृह का चुनाव करते है। इनमें संचित पानी इनकी क्षमता के अनुसार चलता है। नाडी का जल ग्रहण क्षेत्र भी बडा होता है। यहां पर रिसाव कम होने के कारण इनका पानी सात से दस महीने तक चलता है।

नाडी वास्तविक रूप से भू'सतह पर बना प्राकृतिक गड्ढा होता है, जिसमें वर्षा जल आकर संग्रहित होता रहता है। एक समय के उपरांत इसमें गाद भरने से संचय क्षमता घट जाती है। जिसके लिए इसकी समय–समय पर खुदाई की जाती है। बहरोड तहसील के कई गांवों में नाडी का अस्तित्व है जैसे–बर्डोद, गूंती, घिलोथ, तसीगं गांव, नजरपुर आदि में। अधिकांश नाडियों में गाद जमा होने व प्रदूषण के कारण वे अपना वास्तविक स्वरूप खोती जा रही है। अतः नाडियों का अस्तित्व बनाये रखने के लिए क्षेत्र में स्थित नाडियों की समय–समय पर सफाई होना अति आवश्यक है, नाडियों में गाद जमा नही होने देना चाहिए। इसे प्रदूषण से मुक्त रखना होगा, तभी हम जल का सरंक्षण कर पायेंगे।

3. टोबा –नाडी के समान आकृति वाला जल संग्रह केन्द्र टोबा कहलाता है। टोबा का आगोर (जल ग्रहण क्षेत्र) नाडी से अधिक गहरा होता है। संघन संरचना वाली भूमि जिसमें पानी का रिसाव कम होता है, टोबा निर्माण हेतु उपयुक्त स्थान माना जाता है। इसका ढलान नीचे की ओर होना चाहिए। इसके जल का उपयोग मानव व पशुओं द्वारा किया जाता है। टोबा के आस पास नमी होने के कारण प्राकृतिक घास उग आती है, जिसे जानवर चरते है। इनकी समय पर खुदाई के साथ ही जलग्रहण क्षेत्र में उपयुक्त मात्रा में हरियाली विकसित की जाती है। लेकिन वर्तमान में जैसे–जैसे लोगों का रूख भूमिगत जल की तरफ हुआ है, लोग टोबा की तरफ कम ही ध्यान देते है, वे इनकों भूलते जा रहे है तथा धीरे–धीरे इनका अस्तित्व समाप्त हो रहा है। अतः टोबा के पुनरूद्वार के लिए इनका संरक्षण करना अति आवश्यक है। टोबा सरंक्षण का कार्य विशिष्ट

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 9 Issue 4, April - 2019
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

प्रकार से किया जाता है। इस हेतू पूर्व निर्धारित नियमों को मानना होता है, तथा समय–समय पर टोबा की खुदाई करके पायतान (आगोर) को बढाया जाता है। इसको चौड़ा न करके गहरा किया जाता है, ताकि पानी का वाष्पीकरण कम हो व अधिक संचय होता रहे।

4. **तालाब** –वर्षा जल को संचित करने का सबसे प्रमुख स्रोत तालाब रहा है। प्राचीन समय में बने इन तालाबों में अनेक प्रकार की कलाकृतिया बनी हुई है। इन्हें हर प्रकार से रमणीक एवं दर्शनीय स्थल के रूप में विकसित किया जाता है। कुछ तालाबों की तलहटी के समीप कुआं बनाते थे जिन्हें बेरी कहते है। तालाबों की उचित देखभाल की जाती थी, जिसकी जिम्मेदारी समाज पर होती थी। लेकिन वर्तमान में तालाब शहरीकरण की भेट चढ रहे है तथा अधिकतर भूमि औद्योगिक क्षेत्रों में जा रही है, जिससे तालाबों का निर्माण संभव नहीं है।

5. **कुंडी या टांका** – कुंडी ग्रामीण क्षेत्रों में बरसात के जल को संग्रहित करने की महत्वपूर्ण परम्परागत प्रणाली है, इसे कुंड भी कहते है। इनमें संग्रहित जल का मुख्य उपयोग पेयजल के लिए करते है। यह एक प्रकार का सूक्ष्म भूमिगत सरोवर होता है जिसको ऊपर से ढक दिया जाता है। इसका निर्माण अधिकांश जगह मिट्टी व कहीं–कहीं सीमेंट से किया जाता है। कुंडी सब जगह बनाई जाती है। पहाड़ पर बने किलों में, पहाड़ की तलहटी में, घर की छत पर, आंगन में, मन्दिरों में, गांव में, गांव के बाहर बिलग क्षेत्रों में तथा खेत आदि में बनती है। इनका निर्माण सार्वजनिक रूप में लोगों एवं सरकार द्वारा, निजि निर्माण स्वयं व्यक्ति या परिवार विशेष द्वारा करवाया जाता है। निजी कुंडी घर के आंगन या चबूतरों में बनायी जाती है, जबकि सामूदायिक कुंडीयां पंचायत भूमि में बनाई जाती है।

कुंडी का निर्माण जगह के अनुसार किया जाता है। आगंन या चबूतरे का ढाल जिस ओर होता है, उसके निचले भाग में कुंडियाँ बनायी जाती है, जिन्हें गारे चूने से लीप पोतकर रखते है। पानी के रिसाव को रोकने के लिए अन्दर की चिनाई अच्छी तरह करते है। जिस आंगन में बरसाती पानी को एकत्रित किया जाता है, वह आगोर या पायतान कहलाता है, जिसका अर्थ है बटोरना। पायतान को वर्ष पर्यन्त साफ सुथरा रखा जाता है। पायतान से बहकर पानी सूराखों से

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 9 Issue 4, April - 2019
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

होता हुआ अन्दर प्रवेश करता है। इन सुराखों के मुहाने पर जाली लगी रहती है, ताकि कचरा एवं वृक्षों की पत्तियाँ अन्दर प्रवेश न कर सके। कुंडी का आकार कितना ही बडा–छोटा हो, उसे ढककर रखते है। कुंडी के ऊपर गुम्बद बनाया जाता है, जिससे पानी निकालने के लिए तीन–चार सीढ़ियाँ बनाकर ऊपर मीनारनुमा ढेंकली बनायी जाती है जिससे पानी खींचकर निकाला जाता है।

6. **कुंई और डाइ केरियान –** कुंई, जिन्हें कही–कहीं बेरी भी कहा जाता है, अक्सर तालाब के पास बनाई जाती है,जिनमें तालाब का रिसता पानी जमा होता है। इस प्रकार पानी की बर्बादी कम से कम हो पाती है। कुंई आमतौर पर कच्ची ही बनी रहती है और इसकी गहराई भी 10 से 15 मीटर होती है। ये बाहर से लकडी के पट्टों से ढकी रहती है। इनका पानी बचाकर रखा जाता है और जब पानी खत्म हो जाए, तब इसका उपयोग किया जाता है।

जल संसाधनों के अधिकतम सम्भव प्रयोग का स्थानीय ज्ञान एक आपात व्यवस्था डाकेरियान में झलकता है। जिन खेतों में खरीफ की फसल लेनी होती है, वहां बरसाती पानी को घेरे रखने के लिए खेत की मेडे ऊँची कर दी जाती है। ताकी यह पानी जमीन में समा सके। फसल कटने के बाद खेत के बीच में एक छिछला कुआँ खोद देते है, जहां इस पानी का कुछ हिस्सा रिसकर जमा हो जाता है। इसे फिर से काम में लिया जाता है।

पारम्परिक प्रणालियों को पुनर्जीवित करने की आधुनिक कोशिशों को इन प्रणालियों के पतन के कारणों की समझ के साथ आगे बढाना होगा। यह देखना होगा कि उन्हें पुनर्जीवित करने की परिस्थितियां आज, है या नहीं। अगर उन्हें सहारा देने वाला 'समुदाय' ही नहीं है तो उनके लिए ढाँचा खडा करना भी बेमानी होगा। इसलिए पहले तो उस समुदाय को फिर से तैयार करने की कोशिश करनी होगी। इसके अलावा कुछ व्यवस्थाओं में सामाजिक विरोधाभास इस हद तक पैदा हो गये कि ये व्यवस्थाएँ चरमरा गई। इन विरोधाभासो पर सावधानी से गौर करना होगा।

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 9 Issue 4, April - 2019
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Dinesh,C. (2000) : Community Rural water supply management, E-News, New Delhi Pp-1-3

2. Gurjar R.K. and Nitharawa B.C. (1999) : Watershed develpoment programme, A scenario, A participatory isue, journal of water and land use management, marudhara academey Jaipur

3. Gurjar, R.K. (2001) : Water Resources in Rajasthan, Marudhara Academy, Jaipur

4. Kirmerslay, David 1988 : Troubled Water : River, Politics and Pollution, Hilary Shipman, London.

5. Mohnot, S.C. and Singh, P.C. 1993 : Soil and Water Conservation, Intercooperation, Coordination Office, Jaipur.

6. गुर्जर आर. के.एवं जाट बी.सी (2001) : जल प्रबंध विज्ञान, पोइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर

7. भान, सूरज (1995) : फसलों में जल प्रबंध, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली

8. सिंह, आर.एल. 1999 : राज्य विज्ञान (कृषि वर्ग), जयपुर पब्लिशिंग हाउस, जयपुर